Toppersnotes®
Unleash the topper in you

RAS

राजस्थान प्रशासनिक सेवा

मुख्य परीक्षा

राजस्थान लोक सेवा आयोग (RPSC)

भाग – 1

समाजशास्त्र एवं प्रबंधन

SIERRA INNOVATIONS

RAS – मुख्य परीक्षा

भाग - 1

समाजशास्त्र

S.No.	Chapter Name	Page No.

1.	**भारत में समाजशास्त्रीय विचारों का विकास**
	• समाजशास्त्र
	• उपयोगिता
	• समाजशास्त्र की प्रकृति
	• समाजशास्त्री परिप्रेक्ष्य
	  ○ परिप्रेक्ष्य का अर्थ
	  ○ समाजशास्त्र का उद्‌भव व विकास
		1

2.	**भारतीय समाज में जाति एवं वर्ग**
	• जाति व्यवस्था
	  ○ जाति परिभाषाएँ
	  ○ भारत में जाति व्यवस्था की उत्पत्ति
	  ○ भारत में जाति व्यवस्था की उत्पत्ति से संबंधित सिद्धांत
	  ○ भारत में जाति व्यवस्था का महत्व और इसके बदलते परिदृश्य
	  ○ जाति की विशेषताएँ
	  ○ जाति प्रथा के गुण/कार्य
	  ○ जाति प्रथा के दोष/चुनोतियाँ
	• जाति प्रथा के कार्य एवं चुनोतियाँ
	  ○ जाति प्रथा की चुनोतियाँ/हानियाँ/अवगुण
	  ○ प्रभुजाति की अवधारणा
	• जजमानी प्रथा का अर्थ एवं परिभाषा
	• वर्ण तथा जाति में अन्तर
	• वर्ग व्यवस्था
	  ○ जाति और वर्ग में अंतर
	• जाति तथा प्रजाति में अंतर
		8

3.	**परिवर्तन की प्रक्रियाएंः– संस्कृतिकरण, पश्चिमीकरण** • संस्कृतिकरण की प्रक्रिया • संस्कृतिकरण की विशेषताएँ • संस्कार, राजनैतिक और आर्थिक शक्तियों का महत्त्व • संस्कृतिकरण के प्रोत्साहन के कारक • संस्कृतिकरण का आलोचनात्मक विश्लेषण • पश्चिमीकरण	20
4.	**धर्मनिरपेक्षता/लौकिकीकरण** • धर्म • भारत में धर्म–निरपेक्षता	29

	• धर्मनिरपेक्ष राज्य में राज्य की भूमिका • आधुनिक समय में धर्मनिरपेक्ष राज्य की आवश्यकता के कारण • भारतीय धर्मनिरपेक्षता की आलोचनाएँ • सहिष्णुता • धर्मपरिवर्तन • भूमंडलीकरण / वैश्वीकरण • सामाजिक प्रभाव	
5.	**भारतीय समाज के समक्ष चुनौतियाँ** • सामाजिक बुराईयों के कारण • सामाजिक समस्याओं का समाधान • भारत में सामाजिक चुनौतियाँ • बेरोजगारी • भ्रष्टाचार • बाल विवाह • मादक द्रव्य व्यसन • दहेज़ प्रथा • तलाक • कमजोर वर्ग : बुजर्ग, दलित और दिव्यांग	**42**
6.	**राजस्थान में जनजातीयाँ समुदाय : भील, मीणा, गरासिया** • जनजातियों की विशेषताएँ o राजस्थान की भील जनजाति o भीलों की वेशभूषा o भील जनजाति से संबंधित महत्त्वपूर्ण शब्दावली o मीणा जनजाति o आजीविका o सामाजिक जीवन o महत्त्वपूर्ण तथ्य o गरासिया जनजाति o प्रमुख विशिष्टताएँ o महत्त्वपूर्ण तथ्य o वेशभूषा एवं आभूषण o जनजातिय समुदाय की समस्याएँ o जनजाति विकास o जनजातिय सुरक्षा संबधी सैवंधानिक प्रावधान • कार्यक्रम • जनजाति के विकास हेतु कार्यरत संस्थाएँ व आयोग	**70**

प्रबंधन

S.No.	Chapter Name	Page No.
7.	**प्रबंधन – क्षेत्र, अवधारणा एवं कार्य** • विशेषताएँ एवं लक्षण • प्रकृति o प्रबन्ध बहु–विधा के रूप में o प्रबंध विज्ञान एवं कला के रूप में o प्रबन्ध कला के रूप में o प्रबंध पेशे के रूप मे o पेशेवर प्रबंध • प्रबंध के प्रमुख कार्य o नियोजन o संगठन o नियुक्तियाँ o निर्देशन o समन्वय o नियंत्रण o उत्प्रेरण • प्रबन्ध क्षेत्र • क्रियात्मक क्षेत्र o प्रबन्ध प्रक्रिया : विशेषताएँ • प्रबन्ध के कार्य • प्रबन्ध के सिद्धान्त एवं तकनीकें • नवीन प्रवृत्तियाँ o उददेश्यों द्वारा प्रबन्ध o अपवाद द्धारा प्रबन्ध • व्यूहरचनात्मक प्रबन्ध	81
8.	**विपणन** • विपणन की पुरानी विचारधारा • विपणन अवधारणा या विपणन की आधुनिक/नवीन/विस्तृत विचारधारा o आधुनिक विचारधारा की विशेषताएं • विपणन अवधारणा का दोष • विपणन के कार्य o वस्तु नियोजन एवं विकास o विक्रय o क्रय o परिवहन o संग्रह o मूल्य निर्धारण o पैकेजिंग o बाजार अनुसंधान o विज्ञापन • विपणन मिश्रण को प्रभावित करने वाले तत्त्व • विपणन मिश्रण के घटक • उत्पाद मिश्रण	99

	• मूल्य मिश्रण • वितरण मिश्रण • संवर्द्धन मिश्रण • विपणन मिश्रण का निर्माण	
9.	**धन का अधिकतमकरण** • लाभ का अधिकतमीकरण • धन के अधिकतमीकरण के उद्देश्य • वित्त के स्रोत, पूँजी संरचना एवं पूँजी की लागत o वित्त के स्त्रोत o स्थायी या दीर्घकालीन वित्त के स्रोत o साधारण एवं पूर्वाधिकार अंशों में अंतर • ऋण–पत्र • अर्जित आय का पुनः निवेश • विशिष्ट वित्तीय संस्थाएं • लीज/पटटे पर वित्त o अल्पकालीन वित्त के स्रोत • पूँजी ढांचा अथवा पूँजी संरचना o पूँजी संरचना को प्रभावित करने वाले तत्व/घटक • पूँजी की लागत o पूँजी की लागत की विशेषताएँ o पूँजी की लागत की अवधारणा का महत्त्व o पूँजी की लागत का वर्गीकरण o पूँजी की लागत की गणना • ऋण–पूँजी की लागत	**127**
10.	**नेतृत्व** • नेतृत्व की परिभाषाएं • नेतृत्व की प्रमुख विशेषताएं • नेतृत्व की शैली • क्रिस आर्गीरिस के अनुसार नेताओं में अन्तर • टेरी के अनुसार नेतृत्व के प्रकार o उपर्युक्त आधार पर नेतृत्व की शैलियां • नेतृत्व के कार्य • नेतृत्व की तकनीकें • नेतृत्व सम्बन्धी गुण • अभिप्रेरण अथवा प्रोत्साहन o अभिप्रेरण के उद्देश्य o अभिप्रेरण का महत्व o अभिप्रेरण के प्रकार o अभिप्रेरण को प्रभावित करने वाले घटक o अभिप्रेरण की विधियां व तकनीकें o अभिप्रेरण की आधुनिक विचारधाराएं • संचार o प्रशासन में संचार का महत्व o संचार के प्रकार o संचार के सिद्धान्त o संचार प्रक्रिया के अंग o प्रभावी संचार की विशेषताएं o संचार की बाधाएं	**147**

	• भर्ती
	  ○ भर्ती के स्रोत
	• प्रेरण का अर्थ
	  ○ कर्मचारियों को प्रेरित करना
	  ○ प्रेरण कार्यक्रम में चरण
	  ○ प्रेरण कार्यक्रम के लाभ
	  ○ विशिष्ट प्रेरण कार्यक्रम
	• प्रशिक्षण
	  ○ प्रशिक्षण के विशेषतायें
	  ○ प्रशिक्षण एवं शिक्षा
	  ○ प्रशिक्षण के उद्देश्य
	  ○ प्रशिक्षण के क्षेत्र
	  ○ प्रशिक्षण के सिद्धान्त
	  ○ प्रशिक्षण के प्रकार
	  ○ प्रशिक्षण की प्रक्रिया
	  ○ निष्पादन मूल्यांकन के उद्देश्य
	  ○ लाभ
	  ○ दोष
	  ○ निष्पादन मूल्यांकन की सीमाएं	

11.	**उद्यमिता (Entrepreneurship)** • उद्यमिता की अवधारणा • Incubation उद्भवन • स्टार्टअप • यूनिकॉर्न • उद्यमपूँजी • ऐंजल इन्वेस्टर	**195**
12.	**शैक्षिक प्रबंधन** • अत्यावश्यक सेवाओं का प्रबंधन • शिक्षा प्रबंधन • हेल्थकेयर एवं वैलनेस प्रबंधन	**202**

प्रिय विद्यार्थी, टॉपर्सनोट्स चुनने के लिए धन्यवाद।

नोट्स में दिए गए QR कोड्स को स्कैन करने लिए टॉपर्स नोट्स ऐप डाउनलोड करे ।

ऐप डाउनलोड करने के लिए दिशा निर्देश देखे :-

ऐप इनस्टॉल करने के लिए आप अपने मोबाइल फ़ोन के कैमरा से या गूगल लेंस से QR स्कैन करें ।

टॉपर्सनोट्स एग्जाम प्रिपरेशन ऐप

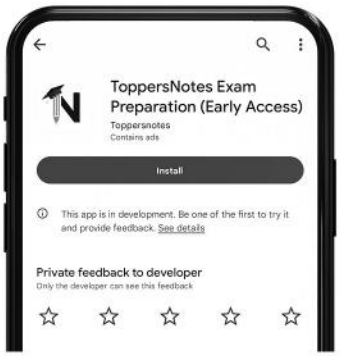

टॉपर्सनोट्स ऐप डाउनलोड करें गूगल प्ले स्टोर से ।

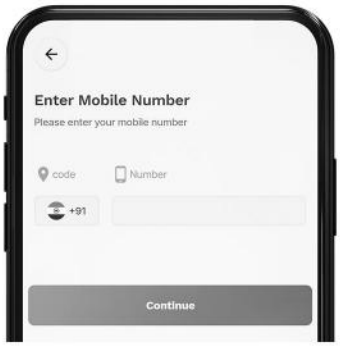

लॉग इन करने के लिए अपना **मोबाइल नंबर** दर्ज करें ।

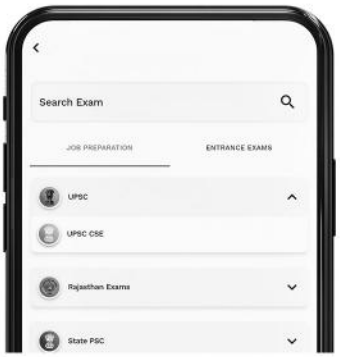

अपनी **परीक्षा श्रेणी** चुनें ।

सर्च बटन पर क्लिक करें ।

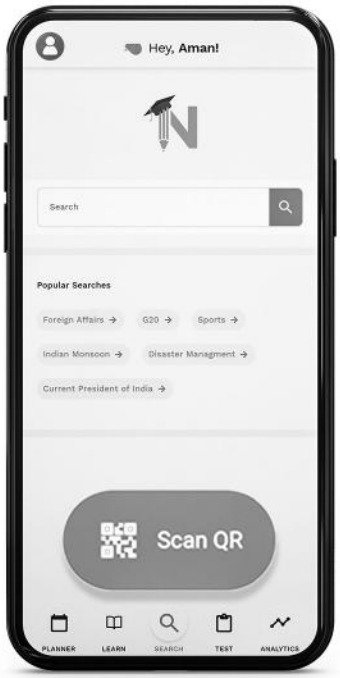

SCAN QR पर क्लिक करें ।

किताब के **QR कोड को स्कैन** करें ।

किसी भी तकनीकी सहायता के लिए
hello@toppersnotes.com पर मेल करें
या **766 56 41 122** पर whatsapp करें ।

1 CHAPTER भारत में समाजशास्त्रीय विचारों का विकास

समाजशास्त्र

- **ऑगस्त कॉम्टे** वह पहले विद्वान थे, जिन्होंने **मानवीय अन्तर्सम्बंधों के विज्ञान के संदर्भ में** 'समाज विज्ञान' शब्द का प्रयोग किया।
- **'समाज विज्ञान'** यह शब्द लैटिन शब्द **'सोसियस' (अतसंबंध**) एवं ग्रीक शब्द **'लोगस' (सिद्धान्त)** से मिल कर बना है
- **जो** मानवीय अन्तर्संबंधों से बने समाज के विज्ञान या सिद्धान्तों को व्यक्त करता है।
- **हर्बर्ट स्पेंसर** ने समाज के **क्रमबद्ध अध्ययन** का विकास किया और खुलकर **समाजशास्त्र शब्द** का प्रयोग किया।
- सरल शब्दों में कहें तो **समाजशास्त्र व्यक्तियों को अध्ययन** करने का एक तरीका है।
- यह सामाजिक **संबंधों, संस्थाओं और समूहों का वैज्ञानिक** अध्ययन है।
- **ऑगस्त कॉम्टे** ने समाज विज्ञान को परिभाषित करने की **समस्या के समाधान के रूप में इसे एक विधी विरोध** के रूप में लिया है और इसकी प्रकृति की रूपरेखा प्रस्तुत की।
- **हॉबहाउस** ने समझाया कि कैसे समाजशास्त्र "मानवीय मस्तिष्कों की अन्योन्य क्रियाओं" का अध्ययन है?
- **पार्क एवं बर्गस** "समाजशास्त्र **सामूहिक व्यवहार का विज्ञान** है"।
- **एमाइल दुर्खिम** ने "समाजशास्त्र /सामाजिक प्रक्रमों का अध्ययन कहा है।"
- **टी.बी. बाटोमोर के अनुसार** – हजारों वर्षों से लोगों ने उन समाजों व समूहों का अवलोकन और चिन्तन किया है, जिसमें वे रहते हैं, फिर भी समाजशास्त्र एक आधुनिक विज्ञान है और एक शताब्दी से अधिक पुराना नहीं है।

उपयोगिता

- विशेष तौर पर भारत जैसे विविधतावादी देशों में इसकी उपयोगिता और भी बढ़ जाती है।
- भारतीय समाज में प्रत्येक स्तर पर विभिन्नता देखी जा सकती हैं एक ओर धार्मिक–आर्थिक विषमताएँ हैं तो दूसरी तरफ परम्परावादी मूल्यों से हमारा नाता अभी बना हुआ है।
- शहरी समुदायों में आधुनिकता के मूल्य भी विद्यमान है।
- भारतीय समाज में व्याप्त परम्परा व आधुनिकता का मिश्रण भारत में भूमिका संघर्ष (Role Conflicts) की स्थिति पैदा करता है।
- इसके अतिरिक्त भारतीय समाज अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना भी कर रहा है।
  - जातिवाद (Casteism)
  - सामाजिक असमानता (Social inequality)
  - स्त्रियों की गिरती स्थिति (Deterriorating condition of women)
- इनको समझने के लिए हमें अपने समाज को समझना होगा।
  - इस तरह समस्याओं के निराकरण के क्षेत्र में यह हमारी सहायता कर सकता है।
- भारतीय परिप्रेक्ष्य में, भिक्षावृत्ति, वेश्यावृत्ति, बाल अपराध, ग्रामीणों की समस्याओं के सामाजिक कारणों को खोज कर इनकी निष्पक्ष व्याख्या की जा सकती है।
  - इसी प्रकार भारत की राष्ट्रीय एकता में बाधक तत्वों को समाप्त करके एकता को बनाए रखा जा सकता है।
  - सम्पन्न व गौरवमयी परम्पराओं को बनाए रखकर सांस्कृतिक पहचान की रक्षा की जा सकती है।
- वर्तमान परिस्थितियों के विश्लेषण के आधार पर नवीन परिस्थितियों के प्रति अभियोजन क्षमता की वृद्धि होती है।
  - इसके साथ–साथ समाजशास्त्र का अध्ययन ग्रामीण समाज के विकास में बाधाओं को समझने में सहायक है, जनजातियों की समस्याओं को समझने में उपयोगी है।
  - परिवार नियोजन सम्बन्धी समस्याओं को समझने में उपयोगी है।
- हालाँकि उपर्युक्त वर्णित समस्याओं के राजनीतिक, आर्थिक व मनोवैज्ञानिक पहलू भी हैं, परन्तु समाजशास्त्रीय पहलू की उपेक्षा से ये समस्याएँ पूर्णतः कब्जे में नहीं आ पाएँगी।

समाजशास्त्र की प्रकृति

- समाजशात्र की प्रकति के रूप में यह देखा जाता है कि समाजशास्त्र कला है या विज्ञान।
- यदि विज्ञान है तो विशुद्ध भौतिक विज्ञान है या आंशिक विज्ञान।
- कुछ विद्वान वैज्ञानिक मानते हैं तथा कुछ वैज्ञानिक नहीं मानते ।
- विज्ञान के मानदण्डों पर समाजशास्त्र को नापने के लिए विज्ञान की विशेषता पर एक नजर डालना जरूरी है।

समाजशास्त्र की वैज्ञानिक प्रकृति

- समाजशास्त्र के जनक **आगस्ट काम्टे सहित, इमाईल दुर्खिम, मेक्सवेबर** इत्यादि विद्वानों ने समाजशास्त्र को आरम्भ से ही विज्ञान माना है।
- हम निम्न आधार पर समाजशास्त्र को विज्ञान मानते हैं
  - वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग
  - वस्तुनिष्ठ अध्ययन
  - सत्यापनीय
  - निश्चितता
  - कार्य-कारण सम्बन्धों की स्थापना
  - सामान्यीकरण करना
  - पूर्वानुमान लगाना
  - आनुभाविक अध्ययन
  - सार्वभौमिकता
- समाजशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है और इस कारण इसकी अपनी सीमाएँ (Limitations) है
- प्राकृतिक विज्ञानों की विषय सामग्री विवेकशील नहीं होती है किन्तु समाजशास्त्र की विषय सामग्री मनुष्य होते हैं जो कि अपने व्यवहार में परिवर्तन ला सकते हैं
- अतः समाजशास्त्र में **सत्यापनीयता व पूर्वानुमान लगाना** प्राकृतिक विज्ञानों से अधिक कठिन होता है।
- इसी प्रकार प्राकृतिक वैज्ञानिकों का अपनी अध्ययन सामग्री से किसी प्रकार का अपनापन, प्यार, मोह, ईष्या, द्वेष, लगाव या नफरत इत्यादि नहीं होता है।
- किन्तु एक समाजशास्त्री अपने जैसे दूसरे मनुष्यों का अध्ययन करता है तो उसके मन में पूर्वधारणा हो सकती है जो उसके अध्ययन को प्रभावित कर सकती है
- ऐसी स्थिति में समाजशास्त्र में वस्तुनिष्ठ अध्ययन करना प्राकृतिक विज्ञानों में अधिक कठिन है।
- अतः हमें यह ध्यान रखना होगा कि **समाजशास्त्र समाज विज्ञान है, प्राकृतिक विज्ञान नहीं है।**

समाजशास्त्र प्राकृतिक विज्ञान क्यों नहीं

1. वस्तुनिष्ठता का अभाव-
2. सामाजिक घटनाओं की परिवर्तनशीलता तथा जटिलता-
3. सामाजिक घटनाओं तथा तथ्यों की माप में कठिनाई-
4. समाजशास्त्र में प्रयोगशाला का अभाव-
5. समाजशास्त्रीय अध्ययनों में सर्वाभौमिकता का अभाव-
6. समाजशास्त्र भविष्यवाणी करने में समर्थ नहीं है-

समाजशास्त्र की वास्तविक प्रकृति

1. **समाजशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है, न कि प्राकतिक-**
   - चँकि समाजशास्त्र. प्राकतिक एंव भौतिक घटनाओं का अध्ययन नहीं करता है अतः इसे प्राकृतिक विज्ञान की श्रेणी में नहीं रखा जाता है।
   - समाजशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान इसलिए है क्योंकि इसमें सामाजिक घटनाओं, सामाजिक सम्बन्धों, सामाजिक समूहों, सामाजिक **प्रक्रियाओं एवं सामाजिक समस्याओं** का ही अध्ययन किया जाता है।

2. **समाजशास्त्र वास्तविक अथवा प्रत्यक्षवादी विज्ञान है न कि आदर्शात्मक**-
   - समाजशास्त्र मे पक्षपात-रहित होकर केवल उन्हीं सामाजिक घटनाओं का अध्ययन किया जाता है जिन्हें प्रत्यक्ष रूप से देखा जा सकता है।
   - समाजशास्त्र 'क्या है' का अध्ययन करता है 'क्या होना चाहिए' का नहीं
   - यह सामाजिक घटनाओं को अच्छा-बुरा या सही-गलत नहीं कहता है और न ही आर्दशवादी बातें करता है बल्कि सामाजिक घटनाओं के प्रति तटस्थ रहता है।
   - सामाजिक घटनाएँ जैसी हैं उन्हें उसी रूप में देखता है एवं प्रस्तुत करता है।
3. **समाजशास्त्र एक विशुद्ध विज्ञान है, व्यवहारिक विज्ञान नहीं है-**
   - समाजशास्त्र एक विशद्ध विज्ञान है इसीलिए यह सामाजिक घटनाओं का अध्ययन करता है एवं उनका वास्तविक ज्ञान प्राप्त करके सिद्धान्त प्रस्तुत करता है। किन्तु इस ज्ञान को या सिद्धान्तों को वह प्रयोग में नहीं लाता है।
   - समाजशास्त्र केवल सिद्धान्त बनाता है इन सिद्धान्तों का व्यवहार में उपयोग अन्य शास्त्र जैसे सामाजिक कार्य, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र आदि करते हैं।
4. **समाजशास्त्र एक अमूर्त विज्ञान है, मूर्त विज्ञान नहीं है**-
   - समाजशास्त्र सामाजिक सम्बन्धों तथा सामाजिक प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है जो दिखाई नहीं देते हैं अर्थात जिनकी प्रकृति अमूर्त है। इसीलिए समाजशास्त्र को अमूर्त विज्ञान कहते है।
   - यह भौतिक वस्तुओं अथवा मूर्त चीजें जो दिखाई देती है का अध्ययन नहीं करता है जैसे जीवन जन्तु, पेड़-पौधे, कुर्सी-मेज व्यक्ति आदि।
5. **समाजशास्त्र एक सामान्य विज्ञान है न कि विशेष विज्ञान-**
   - समाजशास्त्र समाज की सभी घटनाओं का अध्ययन सामान्य रूप से करता है।
   - समाजशास्त्र उन सामान्य नियमों का अध्ययन करता है जो विभिन्न सामाजिक घटनाओं से सम्बन्धित होते हैं।
   - अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, इतिहास अथवा भूगोल की तरह कि विशेष घटना, व्यक्ति अथवा कारक के अध्ययन में ही रूचि नहीं लेता है।
6. **समाजशास्त्र एक तार्किक तथा अनुभवसिद्ध विज्ञान है-**
   - समाजशास्त्र द्वारा किए जाने वाले अध्ययन तर्क पर एवं अनुभव पर आधारित होते हैं अर्थात यह कार्य क्षेत्र में जाकर प्राथमिक रूप से प्राप्त तथ्यों का अध्ययन करता है
   - उदाहरण के लिए महिला शिक्षा की वास्तविकता जानने के लिए जब हम स्वयं महिलाओं से मिलकर उनसे सूचनाएँ प्राप्त करते हैं तो इन सूचनाओं को ही अनुभवसिद्ध तथ्य कहते है। साथ ही ये तथ्य तार्किक भी होते है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि समाजशास्त्र एक प्रत्यक्षवादी, विशुद्ध, अमूर्त, सामान्य, तार्किक तथा अनुभवसिद्ध विज्ञान है।

समाजशास्त्री परिप्रेक्ष्य

परिप्रेक्ष्य का अर्थ

- किसी भी विषय के अध्ययन में एक विशेष पक्ष या पहलू या दृष्टिकोण को लेकर चला जाता है।
  - यह विशेष दृष्टिकोणीय झुकाव (Ideological Orientation) परिप्रेक्ष्य कहलाता है।
- किसी वस्तु के अनेक पक्ष हो सकते हैं तथा उसके पक्ष विशेष का अध्ययन अनुशासनों से किया जाता है।

समाजशास्त्र का उद्भव व विकास

- कुछ ऐसी सामाजिक स्थितियाँ जिन्हें समाजशास्त्र के उद्भव के लिए जिम्मेदार माना जाता है, निम्न है:-
- यूरोप में वाणिज्यिक क्रान्ति
  - पुर्तगाल, इंग्लैण्ड, हालैण्ड और स्पेन जैसे देशों में एशिया के देशों से व्यापार को बढ़ाने की होड़ शुरू
  - भारत और अमेरिका जैसे देशों की खोज हुई।
  - इससे यूरोप का व्यापार एक वैश्विक व्यापार में बदलने लगा।
  - कागज की मुद्रा का विकास हुआ।

- बैकिंग व्यवस्था का विकास हुआ,
- मध्यमवर्ग का उदय हुआ,
- मध्यकालीन यूरोप में पुनर्जागरण (Renaissance) हुआ
- इसे वैज्ञानिक क्रान्ति की शुरूआत माना जाता है,
- चिकित्सा के क्षेत्र में मानव शरीर विच्छेदन को स्वीकार किया गया, रसायन शास्त्र, भौतिक शास्त्र, गणित व खगोल विज्ञान इत्यादि का विकास हुआ।

- **फ्रांसीसी क्रान्ति(1789)**
  - इस क्रान्ति द्वारा स्वतन्त्रता, समानता एवं बंधुत्व का विचार उभर कर सामने आया,
  - लोग अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो गये।
  - क्रान्ति द्वारा व्यवस्था बदल गई व लोकतन्त्र की स्थापना हुई।
  - फ्रांसीसी क्रान्ति में मान्टेस्क्यु (Montesquieu) वाल्टेयर (Voltaire) व रूसो (Rousseau) जैसे दार्शनिक विचारकों के विचारों का महत्वपूर्ण योगदान माना जाता है,
  - इनके विचारों से तार्किकता का विकास हुआ।

- **औद्योगिक क्रान्ति**
  - अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध व उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में यूरोप के कुछ देशों की तकनीक और सामाजिक-सांस्कृतिक व आर्थिक स्थितियों में बड़ा बदलाव आया।
  - औद्योगिक क्रान्ति की शुरूआत इंग्लैण्ड से मानी जाती है।
  - इस क्रान्ति ने यूरोप व अन्य देशों के नागरिकों के सामाजिक व आर्थिक जीवन में अनेक बदलाव किये।
  - उद्योगों का मशीनीकरण हुआ,
  - उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि हुई,
  - पूँजीवाद का विकास हुआ,
  - औद्योगिक श्रमिकों के रूप में नये वर्ग का उदय हुआ,
  - लोग कृषि व कुटीर उद्योगों को छोड़कर बड़े उद्योगों में मजदूरी करने लगे।
  - नये नये शहरों का विकास होने लगा किन्तु इस व्यवस्था में श्रमिकों का शोषण बड़े पैमाने पर हो रहा था।

  निष्कर्ष
  - इस प्रकार यूरोप में होने वाले सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक व आर्थिक बदलावों ने एक ऐसे विषय की आवश्यकता को उत्पन्न किया जो सामाजिक व्यवस्था का वैज्ञानिक तरीके से अध्ययन कर सके
  - अतः सन् 1838 में फ्रांसीसी दार्शनिक आगस्ट काम्टे (Auguste Comte) ने एक विषय के रूप में समाजशास्त्र की शुरूआत की।
  - उन्होंने पहले इसे सामाजिक भौतिकी (Social Physics) नाम दिया जिसे बाद में समाजशास्त्र (Sociology) कर दिया।

भारत में समाजशास्त्र का विकास

- भारत में समाजशास्त्र की एक विषय के रूप में देर से शुरूआत हुई।
- किन्तु सामाजिक जीवन के विषय में अध्ययन प्राचीन काल से ही होता रहा है।
- 'रामायण' व 'महाभारत' जैसे ग्रन्थ, कौटिल्य का 'अर्थशास्त्र' व मनु द्वारा लिखित 'मनुस्मृति' तथा ऐसे ही अनेक ग्रन्थों में हमें तात्कालिक सामाजिक व्यवस्था के विषय में पता चलता है
- किन्तु यह ग्रन्थ किसी विषय के परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखकर नहीं लिखे गये थे।
- यूरोप में समाजशास्त्र के उद्भव के प्रमुख कारण फ्रांसीसी क्रान्ति व औद्योगिक क्रान्ति माने जाते हैं
- भारत में समाजशास्त्र बहुत बाद में आया तथा उस समय भारत ब्रिटिश अधीनता में था
- इस कारण यहाँ प्रारम्भिक समाजशास्त्रीय अध्ययन अधिकांशतः यूरोपियन विद्वानों द्वारा किये गये।
- भारत में समाजशास्त्र की वास्तविक शुरूआत **बम्बई विश्वविद्यालय से** मानी जाती है। जहाँ सन् **1919 में पैट्रिक गेडिस** की अध्यक्षता में समाजशास्त्र विभाग की शुरूआत हुई
- हालांकि ऐच्छिक विषय के रूप में यह सन् 1914 से पढ़ाया जाने लगा था।

- इसी तरह **1917 में ऐच्छिक विषय के रूप** में कलकत्ता विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र की शुरूआत हुई।
- **1921 में लखनऊ विश्वविद्यालय** में समाजशास्त्र की शुरूआत हुई
- **1923 में आन्ध्र व मैसूर विश्वविद्यालयों** में भी इसकी शुरूआत हुई।
- 1952 में **'Indian Sociological Society'** की स्थापना की गई। जिससे सभी समाजशास्त्रियों को जुड़ने का आधार मिला।
- प्रारम्भ में समाजशास्त्र को अन्य विषयों के साथ पढ़ाया जाता था। जिनमें **मानवशास्त्र एवं अर्थशास्त्र** प्रमुख थे।
- **'टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल वर्क** लखनऊ तथा **'इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साईन्स'** आगरा जैसे अनुसंधान केन्द्रों की भी स्थापना हुई, जहाँ **समाजशास्त्रीय अनुसंधान** होने लगे।
- **भारत के प्रमुख समाजशास्त्रियों में से कुछ निम्न है**-
  - एस.सी. दूबे,
  - एम.एन. श्रीनिवास - संस्कृतिकरण' 'पश्चिमीकरण' व 'प्रभुत्व जाति' की अवधारणा
  - ए.के. सरन,
  - डी.एन. मजुमदार,
  - जी.एस. घुरिये,
  - के.एम. कपाड़िया,
  - पी.एच. प्रभु,
  - ए.आर. देसाई,
  - इरावती कर्वे,
  - राधाकमल मुकर्जी
  - योगेन्द्र सिंह इत्यादि।

भारतीय समाजशास्त्री

गोविन्द सदाशिव घुर्ये (1893-1983)

- गोविन्द सदाशिव घुर्ये का बौद्धिक एवं अकादमिक क्षेत्र में बड़ा नाम है।
- इन्हें भारतीय समाजशास्त्र का जनक कहा जाता है।
- इन्होंने न केवल भारत में समाजशास्त्र को स्थापित किया वरन् ऐसे छात्रों को भी तैयार किया जिन्होंने देश में समाजशास्त्र के समाजशास्त्रीय शोध तथा सिद्धान्तों के द्वारा भारतीय समाजशास्त्र को मजबूती प्रदान की।

घुर्ये की प्रमुख कृतियां	घुर्ये का योगदान
• कास्ट एण्ड रेस इन इण्डिया 1932 • सेक्स हेबिट्स ऑफ मिडिल क्लास पिपल 1938 • दि एबओरिजनल्स सो-काल्ड एण्ड दियर फ्यूचर • कल्चर एण्ड सोसायटी 1945 • आफ्टर ए सेन्चुरी एण्ड ए क्वार्टर 1960 • कास्ट क्लास एण्ड ओक्युपेशन 1961 • फैमिली एण्ड किन इन इण्डो यूरोपियन कल्चर 1962 • सिटीज एण्ड सिविलाइजेशन 1962 • दि शिड्युल्ड ट्राइब्ज 1963 • दि महादेव कोलिज 1963 • एनोटोमो ऑफ ए रूरल कम्युनिटी 1963 • विदर इण्डिया 1974 • इण्डिया रिक्रियेट्स डेमोक्रेसी 1978 • वैदिक इण्डिया 1979	• भारतीय संस्कृति तथा सभ्यता। • प्रजाति। • धर्म। • जाति एवं नातेदारी व्यवस्था। • आदिवासी अध्ययन। • ग्रामीण नगरीकरण। • भारतीय साधु। • सामाजिक तनाव। • भारतीय वेशभूषा

डी. पी. मुकर्जी (1894- 1961)

डी.पी. मुकर्जी की प्रमुख कृतियाँ	डी.पी. मुकर्जी का प्रमुख योगदान
• व्यक्तित्व और सामाजिक विज्ञान। • समाजशास्त्र की मूल अवधारणाएं • आधुनिक भारतीय संस्कृति। • भारतीय युवकों की समस्याएं। • टैगोर एक अध्ययन। • भारतीय संगीत का परिचय • भारतीय इतिहास पर एक अध्ययन • विचार एवं प्रतिविचार 1946 • विविधताएं 1958	• व्यक्तित्व। • आधुनिक भारतीय संस्कृति । • परम्पराएं। • समाजशास्त्र की प्रकृति तथा पद्धति • नये मध्यम वर्ग की भूमिका। • भारतीय इतिहास की रचना। • आधुनिकीकरण। • संगीत।

ए.आर. देसाई (1915-1994)

- अक्षय कुमार रमनलाल देसाई का जन्म 16 अप्रेल 1915 में गुजरात में नाड़ियाद कस्बे में हुआ था।

ए.आर.देसाई की कृतियाँ	ए.आर.देसाई का योगदान
• सोशयल बैकग्राउण्ड ऑफ इंडियन नेशनलिज्म 1946 • रिसेन्ट ट्रेन्ड्स इन इंडियन नेशनलिज्म 1960 • रूरल सोश्लोजी इन इंडियन 1969 • स्लम्स एण्ड अरबेनाइजेशन (डि.पिल्लई के साथ)1970 • स्टेट एण्ड सोसाइटी इन इंडिया 1975 • पीजेन्ट् स्ट्रगल इन इंडिया 1979 • इंडियाज पाथ ऑफ डेवलपमेंट 1984 • अग्रेरियन स्ट्रगल्स इन इंडिया आफ्टर इंडिपेन्डेंस 1986	• भारत में ग्राम। • भारतीय समाज का रूपान्तरण • भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि। • किसान संघर्ष • राज्य और समाज • गंदी बस्तियाँ और नगरीकरण • राष्ट्रीय आन्दोलन

एम.एन श्रीनिवास (1916-1999)

- मैसूर नरसिम्हाचार श्रीनिवास का जन्म 16 नवम्बर 1916 मैसूर के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था।
- उनकी दीक्षा ब्राह्मण परम्पराओं-ब्राह्मणत्व के प्रशिक्षण में हुई थी।
- उन्होंने घुर्ये के सान्निध्य में एम.ए. किया।
- उन्होंने एम.ए. के शोध प्रबंध में "मैसूर में विवाह और परिवार" को अपने अध्ययन का विषय बनाया।
- उन्होंने मुम्बई विश्वविद्यालय में ही "दक्षिण भारत के कुर्ग लोगों" के विषय पर डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की।
- इसी विषय पर आपने अपनी पुस्तक-रिलिजन एण्ड सोसाइटी अमांग दि कुर्ग ऑफ साउथ इंडिया का प्रकाशन 1952 में करवाया। यह पुस्तक काफी लोकप्रिय हुई।

• एम.एन. श्रीनिवास की कृतियां	• एम. एन. श्रीनिवास का योगदान
○ मैसूर में विवाह और परिवार 1942 ○ दक्षिण भारत के कुर्ग में धर्म व समाज 1952 ○ भारतीय गांव 1955 ○ आधुनिक भारत में जाति और अन्य लेख 1962 ○ आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन 1966 ○ दि रिमेम्बर्ड विलेज 1976 ○ भारत : सामाजिक संरचना 1980 ○ प्रभु जाति और अन्य लेख 1987 ○ दि कोहिजिवे रोल ऑफ संस्कृताईजेशन 1989	○ सामाजिक परिवर्तन : संस्कृतिकरण, पश्चिमीकरण, ब्राह्मणीकरण ○ धर्म और समाज ○ गांव ○ जाति ○ प्रभु जाति ○ आधुनिक भारत ○ विवाह और परिवार

○ ऑन लिविंग इन ए रिवोल्यूशन एण्ड अदर ऐसेज 1972 ○ विलेज, कास्ट, जेन्डर एण्ड मेथड़ 1996 ○ इण्डियन सोसायटी थू पसर्नल राइटिंग्ज 1996	

आर. के मुकर्जी (1889-1968)

- राधाकमल मुकर्जी का जन्म 7 सितम्बर 1889 को बंगाल के मुर्शिदाबाद जिले के बरहामपुर में बंगाली ब्राह्मण परिवार में हुआ था।
- मुकर्जी की प्रारम्भिक शिक्षा बरहामपुर में हुई। वे बरहामपुर के कृष्णनाथ महाविद्यालय के बी.ए. के छात्र रहे।
- बाद में उन्होंने प्रेजीडेन्सी महाविद्यालय कोलकाता से इतिहास तथा अंग्रेजी साहित्य में आनर्स किया।
- यहीं पर इनका सम्पर्क एच.एम. पेरीवाल, अरविन्द घोष के भाई एम. घोष और भाषाविद हरिनाथ डे जैसे विद्वानों से हुआ। इन विद्वानों का मुकर्जी पर बहुत प्रभाव पड़ा।
- 1910 में बरहामपुर महाविद्यालय में अर्थशास्त्र के शिक्षक बने यहीं पर इन्होंने "फाउण्डेशन ऑफ इण्डियन इकोनोमी' पुस्तक लिखी।
- 1917 से 1921 तक कोलकाता विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र तथा राजनीतिशास्त्र विषयों को पढ़ाया।
- यहीं पर इन्होंने "ग्रामीण समुदाय में सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन" पर डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की।

राधाकमल मुकर्जी की कृतियां	मुकर्जी का समाजशास्त्रीय योगदान
• दी फाउण्डेशन ऑफ इण्डियन इकॉनोमिक्स 1916 • दी रूरल इकॉनोमी ऑफ इण्डिया 1926 • रिजनल सोशयोलॉजी 1926 • दी लेण्ड प्रोबल्म ऑफ इण्डिया 1927 • इन्ट्रोडेक्शन ऑफ सोशयल साईकोलॉजी 1928 • फील्ड एण्ड फारमर ऑफ ओउध 1929 • दी थ्री वेस : दी वेस ऑफ ट्राससेंडालिस्ट रिलिजन एज ए सोशयल नार्म 1929 • सोशयोलॉजी ऑफ मैसटीसीजल 1931 • रिजनल बैलेन्स ऑफ मेन 1938 • मेन एण्ड हीस हेबेटेशन 1940 • इण्डियन वर्किंग क्लास 1945 • इन्टर कास्ट टेंशन 1951 • ए जनरल थ्योरी ऑफ सोसायटी 1956 • दी फिलोसॉफी ऑफ सोशयल साईन्स 1960 • सोशयल प्रोफाईल ऑफ ए मैटोपॉलिस 1963 • दी डाईमेन्शनस ऑफ ह्यूमन वेल्यूस 1964	• भारतीय संस्कृति • समाज का सिद्धान्त • सार्वभौमिक सभ्यता का सिद्धान्त • आर्थिक क्रियाकलाप और सामाजिक व्यवहार • व्यक्तित्व, समाज और मूल्य • समुदायों का समुदाय • नगरीय सामाजिक समस्या • सामाजिक परिस्थितिकी

2 CHAPTER भारतीय समाज में जाति एवं वर्ग

जाति व्यवस्था

- जाति शब्द **अंग्रेजी शब्द 'कास्ट' (Caste) का** हिन्दी रूपान्तर है।
- इसका **पहला उपयोग 1563 ई० में ग्रेसिया डी ओर्टा** ने किया था।
- उनके शब्दों में, "लोग अपने पैतृक व्यवसाय को परिवर्तित नहीं करते हैं। इस प्रकार जूते बनाने वाले लोग एक ही प्रकार (जाति) के हैं।'
- **अब्बे डुबायस** ने इसे प्रयुक्त किया है। उनका मत है कि **'कास्ट' शब्द यूरोप में किसी कबीले और वर्ग को** व्यक्त करने के लिए उपयोग में लिया जाता रहा है।
- **ए० आर० वाडिया (**A. R. Wadia) का मत है कि 'कास्ट' शब्द लैटिन भाषा के 'कास्टस' (Castus) से मिलता-जुलता शब्द है जिसका अर्थ विशुद्ध प्रजाति या नस्ल होता है।
- कुछ लोग इस शब्द की **उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द 'कास्टा' (Casta)** से मानते हैं जिसका अर्थ प्रजातीय तत्त्व, नस्ल, अथवा पैतृक गुणों से सम्पूर्ण है।
- हिन्दी का **'जाति' शब्द संस्कृत भाषा की 'जन' धातु से बना** है जिसका अर्थ **'उत्पन्न होना' व 'उत्पन्न करना** है।
- इस दृष्टिकोण से जाति का अभिप्राय जन्म से समान गुण वाली वस्तुओं से है। परन्तु समाजशास्त्र में 'जाति' शब्द का प्रयोग विशिष्ट अर्थों में किया जाता है।

जाति की परिभाषाएँ

- **रिजले (Risley) के अनुसार**-"यह परिवार या कई परिवारों का संकलन है जिसको एक सामान्य नाम दिया गया है, जो किसी काल्पनिक पुरुष या देवता से अपनी उत्पत्ति मानता है तथा पैतृक व्यवसाय को स्वीकार करता है और जो लोग विचार कर सकते हैं उन लोगों के लिए एक सजातीय समूह के रूप में स्पष्ट होता है।'
- **मैकाइवर एवं पेज (MacIver and Page) के अनुसार**-"जब व्यक्ति की प्रस्थिति पूर्णत: पुर्वनिश्चित होती है अर्थात जब व्यक्ति अपनी प्रस्थिति में किसी भी तरह के परिवर्तन की आशा लेकर नहीं उत्पन्न होता, तब वर्ग जाति के रूप में स्पष्ट होता है।"
- **मजूमदार एवं मदन** (**Majumdar and Madan) के अनुसार**-"जाति एक बन्द वर्ग है।"
- **दत्त (Dutta) के अनुसार-**
  - **"**एक जाति के सदस्य जाति के बाहर विवाह नहीं कर सकते हैं।
  - अन्य जाति के लोगों के साथ भोजन करने और पानी पीने के सम्बन्ध में इसी प्रकार के परन्तु कुछ कम कठोर नियन्त्रण हैं।
  - अनेक जातियों के कुछ निश्चित व्यवसाय हैं।
  - जातियों में संस्तरणात्मक श्रेणियाँ हैं, जिनमें सर्वोपरि ब्राह्मणों की सर्वोच्च स्थिति है।
  - मनुष्य की जाति का निर्णय जन्म से होता है।
  - यदि व्यक्ति नियमों को भंग करने के कारण जाति से बाहर न निकाल दिया गया हो तो एक जाति से दूसरी जाति में परिवर्तन होना सम्भव नहीं है।"
- **कूले** (**Cooley) के अनुसार**-"जब कोई भी वर्ग पूर्णत: वंशानुक्रमण पर आधारित हो जाता है तो वह जाति कहलाता है।"
- **केतकर (Ketkar) के अनुसार**-"जाति जिस रूप में आज है उसे एक सामाजिक समूह के रूप में समझा जा सकता है जो मुख्यतः दो विशेषताओं से मिलकर बनता है-पहले यह कि इसके सदस्य जन्म से ही बन जाते हैं, दूसरे सभी सदस्य अत्यन्त कठोर सामाजिक नियम द्वारा समूह से बाहर विवाह करने से रोक दिए जाते हैं।'

- **जाति की परिभाषाओं के आधार पर निष्कर्ष**
  - जाति का पद व्यक्ति को जन्म से प्राप्त होता है
  - जाति की सदस्यता केवल उसमें पैदा होने वाले व्यक्तियों तक ही सीमित होती है।
  - एक बार जाति में जन्म लेने के बाद जाति में परिवर्तन नहीं किया जा सकता है।
  - जाति अन्तर्विवाही होती है अर्थात् एक जाति के व्यक्ति को विवाह अपनी जाति में ही करना होता है।
  - प्रत्येक जाति का व्यवसाय निश्चित रहता है
  - उसमें भोजन तथा सामाजिक सहवास से सम्बन्धित प्रतिबन्ध होते हैं।

भारत में जाति व्यवस्था की उत्पत्ति

- पहले भारत में हर एक व्यक्ति की जाति अपने व्यवसाय से परिभाषित की जाती थी और व्यक्ति की मृत्यु तक उसे उसी व्यवसाय में रहना होता था।
- उच्च जाति के लोगों को किसी अन्य जाति के लोगों से आपस में मिलने और शादी करने की अनुमति नहीं मिलती थी।
  - इस प्रकार भारत में जातियाँ वास्तव में समाज को अलग कर रही थीं।
- आम तौर पर जाति व्यवस्था हिंदू धर्म से जुड़ी होती है।
  - ऋग्वेद (प्रारंभिक हिंदू पाठ) के अनुसार चार वर्ग थे जिन्हें 'वर्ण' कहा जाता था।
  - वर्गों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र होते थे।
  - अधिकांश इतिहासकार आज भी मानते हैं कि आज की जाति व्यवस्था इन वर्गों पर आधारित है।
- इसके अलावा यहाँ पाँचवीं श्रेणी भी मौजूद थी जो शूद्रों से भी कमजोर मानी जाती थीं और वह ''अछूत" या दलित होते थे।
  - ये वे व्यक्ति थे जो मलमूत्र या मृत पशुओं को निकालने का कार्य करते थे।
    - इसीलिए उन्हें मंदिरों में प्रवेश करने और एक ही जल स्रोत से पानी पीने आदि की अनुमति नहीं होती थी।
  - छुआ–छूत भेद–भाव का सबसे सामान्य रूप है जो कि भारत में जाति व्यवस्था पर आधारित है।
  - लेकिन कब और कितनी जातियाँ भारत में उत्पन्न हुई हैं, यह स्पष्ट नहीं है।
- जाति व्यवस्था की उत्पत्ति के संबंध में कई सिद्धांत आगे रखे गए हैं लेकिन अब तक इस संबंध में कोई ठोस सबूत नहीं मिला है।

उत्पत्ति से संबंधित सिद्धांत

- **पारंपरिक सिद्धांत**
  - इस सिद्धांत के अनुसार ब्रह्माण्ड के निर्माता ब्रह्मा जी ने जाति व्यवस्था का निर्माण किया था।
  - ब्रह्मा जी के विभिन्न अंगों से जैसे उनके मुख से ब्राह्मणों का, हाथ से क्षत्रिय, वैश्य पेट से और इसी तरह अन्य विभिन्न जातियों का जन्म हुआ।
  - विभिन्न जातियों के लोग अपने मूल स्रोत के अनुसार कार्य करते हैं।
  - प्राचीन भारत में विभिन्न उपजातियाँ इन जातियों से पैदा हुईं और इसने मनु के वर्णन के अनुसार प्राचीनकाल–संबंधी व्याख्या प्राप्त की है।
  - इस सिद्धांत की आलोचना की गई है क्योंकि यह एक अलौकिक सिद्धांत है और इसके आधार अस्तित्व सिर्फ दिव्य (कल्पनीय) हैं।
- **राजनीतिक सिद्धांत**
  - इस सिद्धांत के अनुसार ब्राह्मण समाज पर शासन करने के अलावा उन्हें पूर्ण नियंत्रण में रखना चाहते थे।
    - इसलिए उनके राजनीतिक हित ने भारत में एक जाति व्यवस्था बनाई।
      - ➢ इसमें एक फ्रांसीसी विद्वान निबे दुबास ने मूल रूप से इस सिद्धांत को आगे बढ़ाया, जो भारतीय विचारकों डॉ. घुर्ये जैसे लोगों से भी समर्थित थे।
- **धार्मिक सिद्धांत**
  - यह माना जाता है कि विभिन्न धार्मिक परंपराओं ने भारत में जाति व्यवस्था को जन्म दिया था।

- राजा और ब्राह्मण और धर्म से जुडे लोग उच्च पदों पर आसीन थे लेकिन अलग–अलग लोग शासक के यहाँ प्रशासन के लिए अलग–अलग कार्य करते थे जो बाद में जाति व्यवस्था का आधार बन गए थे।
- इसके साथ–साथ, भोजन की आदतों पर प्रतिबंध लगाया जो जाति व्यवस्था के विकास के लिए प्रेरित हुआ।
- इससे पहले दूसरों के साथ भोजन करने पर कोई प्रतिबंध नहीं था क्योंकि लोगों का मानना था कि उनका मूल एक पूर्वज से था।
  - लेकिन जब उन्होंने अलग–अलग देवताओं की पूजा शुरू की तो उनकी भोजन की आदतों में बदलाव आया।
- इसने भारत में जाति व्यवस्था की नींव रखी।

- **व्यावसायिक सिद्धांत**
  - नेस्फील्ड ने मूल रूप से व्यावसायिक नाम का सिद्धांत दिया, जिसके अनुसार भारत में जाति किसी व्यक्ति के व्यवसाय के अनुसार विकसित हुई थी।
    - जिसमें श्रेष्ठ और निम्नतर जाति की अवधारणा भी इसके साथ आयी क्योंकि कुछ व्यक्ति बेहतर नौकरियाँ कर रहे थे और कुछ कमजोर प्रकार की नौकरियों में थे।
  - जो लोग पुरोहितों का कार्य कर रहे थे, वे श्रेष्ठ थे और वे ऐसे थे जो विशेष कार्य करते थे।
  - ब्राह्मणों में समूहीकृत समय के साथ उच्च जातियों को इसी तरह से अन्य समूहों का भी भारत में विभिन्न जातियों के लिए अग्रणी बनाया गया।
- **विकासवादी सिद्धांत**
  - जाति व्यवस्था सिर्फ अन्य सामाजिक संस्था की तरह है जो विकास की प्रक्रिया के माध्यम से विकसित हुई है।

भारत में जाति व्यवस्था का महत्व और इसके बदलते परिदृश्य

- हालाँकि समय के साथ कई चीजें बदल गई हैं और जाति व्यवस्था भी बदल चुकी है लेकिन फिर भी यह विवाह और धार्मिक पूजा जैसी जीवन की प्रमुख घटनाओं में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।
- भारत में कई स्थान आज भी हैं जहाँ शूद्रों को मंदिर में प्रवेश करने और पूजा करने की अनुमति नहीं दी जाती है।
  - जबकि क्षत्रिय और वैश्य जाति इस संबंध में पूर्ण अधिकारों का आनंद उठाते हैं।
- जाति व्यवस्था समस्याग्रस्त हो जाती है जब इसका उपयोग समाज की रैंकिंग के लिए किया जाता है और साथ ही जब यह प्राकृतिक और मानव निर्मित संसाधनों की असमान पहुँच की अगुवाई करता है।
- शहरी मध्यवर्गीय परिवारों में जाति व्यवस्था महत्वपूर्ण नहीं है लेकिन यह विवाह के दौरान एक भूमिका निभाती है। यहाँ तक कि इसमें और भी समायोजन किए जाते हैं।
- आजादी के साथ–साथ स्वतंत्रता के बाद भी भारत में जाति–आधारित असमानताओं को खत्म करने के लिए कई आंदोलन और सरकारी कार्रवाइयाँ भी हुईं।
  - निम्न जातियों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने के लिए, गाँधीजी ने निम्न जाति के लोगों के लिए 'हरिजन' शब्द (भगवान के लोगों) का इस्तेमाल करना शुरू कर दिया था।
    - लेकिन यह शब्द सार्वभौमिक रूप से स्वीकार नहीं किया गया था।
  - उन्होंने एक ही उद्देश्य के लिए एक अलग समूह बनाने की बजाय निम्न जाति के लोगों को सुधारने के लिए प्रोत्साहित भी किया।
  - ब्रिटिश सरकार भी 400 समूहों की एक सूची के साथ आई थी जिन्हें अछूत के रूप में माना जाता था।
  - बाद में इन समूहों को अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के रूप में जाना जाता था।
    - 1970 के दशक में अछूतों को दलित कहा जाने लगा।
- 19वीं सदी के मध्य में ज्योतिबा राव फुले ने निम्न जाति के लोगों की स्थिति का उत्थान करने के लिए दलितों के लिये आंदोलन शुरू किया।
  - निम्न जाति के लोगों का समर्थन करने के लिए डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का योगदान बहुत महत्वपूर्ण था।
  - उन्होंने 1920 और 1930 के बीच एक महत्वपूर्ण दलित आंदोलन शुरू किया।
  - उन्होंने भारत में दलितों की स्थिति सुधारने के लिए स्वतंत्र भारत में आरक्षण की एक प्रणाली भी बनाई और उनके नेतृत्व में छह लाख दलितों ने बौद्ध धर्म को भी अपनाया था।
- लेकिन आधुनिक भारत में अलग–अलग लोगों के बीच संबंध पूरी तरह से सुगम नहीं हो पाये हैं।

- जैसा कि अलग–अलग मान के बावजूद हर कोई एक जगह पर भोजन कर सकता है, पर्यटन स्थल पर जा सकता है लेकिन फिर भी लोग अंतर्जाति विवाद के खिलाफ हैं।
- व्यवसाय क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है क्योंकि अब यह जाति तक सीमित नहीं है।

- हालाँकि समय के साथ कई परिर्वतन होते हैं लेकिन फिर भी भारत को आज भी इस मुद्दे पर कार्य करने की आवश्यकता है ताकि जाति पर आधारित हमारी असमानता को समाज से हमेशा के लिये उखाड़ फेंका जा सके।

जाति की विशेषताएँ

जाति की प्रमुख विशेषताएँ

- **एन० के० दत्त ने जाति व्यवस्था के निम्नलिखित छह लक्षणों का उल्लेख किया है**
  1. जाति का कोई भी सदस्य **अपनी जाति से बाहर विवाह नहीं** कर सकता है।
  2. प्रत्येक जाति में **भोजन और खान-पान सम्बन्धी कुछ-न-कुछ प्रतिबन्ध** होते हैं जो सदस्यों को अपनी जाति से बाहर भोजन करने पर रोक लगाते हैं। ये प्रतिबन्ध प्रत्येक जाति में लागू होते हैं।
  3. प्रायः जाति के **पेशे निश्चित** होते हैं।
  4. सभी जातियों और उप-जातियों में एक **ऊँच-नीच या संस्तरण की व्यवस्था** पाई जाती है जिसमें ब्राह्मण जाति का स्थान सर्वोपरि है और उसे सर्वोच्च मान्यता प्राप्त है।
  5. जन्म के साथ ही व्यक्ति की **जाति का निश्चय जीवन भर के लिए** हो जाता है। केवल जाति के नियमों के विपरीत कार्य करने पर ही उसे जाति से निकाला जाता है। इसके अतिरिक्त, एक जाति से दूसरी जाति में जाना सम्भव नहीं है।
  6. सम्पूर्ण **जाति व्यवस्था ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा पर** निर्भर है।
- **डॉ. घुर्ये ने विशेषताओं का उल्लेख इस प्रकार किया है–**
  - खानपान व सामाजिक सहवास पर अन्य जाति में प्रतिबन्ध होता है।
  - विवाह पर प्रतिबंध होता है।
  - व्यवसाय का स्वतंत्र चुनाव नहीं किया जा सकता।
  - संस्तरण।
  - समाज का खण्डात्मक विभाजन।
  - सामाजिक और धार्मिक निर्योग्यताओं पर विशेषाधिकार
- **एम० एन० श्रीनिवास** के अनुसार पिछली शताब्दियों के दौरान प्रचलित जाति के लक्षणों को **निम्नलिखित नौ शीर्षकों** के अन्तर्गत वर्णित किया जा सकता है
  1. संस्तरण अथवा पदानुक्रम,
  2. अन्तः विवाह तथा अनुलोम विवाह,
  3. व्यावसायिक सम्बद्धता,
  4. भोजन, जलपान एवं धूम्रपान पर प्रतिबन्ध,
  5. प्रथा, भाषा एवं पहनावे का भेद,
  6. अपवित्रीकरण,
  7. संस्कार एवं अन्य विशेषाधिकार तथा निर्योग्यताएँ,
  8. जाति संगठन तथा
  9. जाति गतिशीलता

जाति प्रथा के गुण/कार्य

- **सामाजिक स्थिति का निर्धारण करती है**
  - जाति व्यवस्था के आधार पर जन्म से ही व्यक्ति को निश्चित स्थिति प्राप्त हो जाती है।
  - यदि वह जाति के स्वीकृत व्यवहार संबंधी नियमों का उल्लघंन न करें तो सम्पत्ति, निर्धनता, सफलता, असफलता व्यक्ति के गुण–दोष आदि उसे इस स्थिति से वंचित नहीं कर सकते ।
  - जाति व्यवहार संबंधी नियमों का उल्लंघन करने पर उसे जाति से निष्कासित कर दिया जाता है।

- **सामाजीकरण करती हैः**
  - जाति व्यक्ति के खान–पान, वेश–भूषा, रहन–सहन आदि को निर्धारित करती हैं।
  - जाति की प्रेरणा से व्यक्ति अपने आपको समाज के अनुसार बना लेता है।।
- **वैवाहिक समूह निश्चित करती है**
  - प्रत्येक जाति अपने सदस्य के लिए वैवाहिक समूह की सीमा निश्चित करती है।
  - वह अपने सदस्यों को यह बताती है कि वे किन लोगों के साथ किस समूह में विवाह कर सकते हैं।
  - जाति विवाह के सम्बन्ध में अनेक प्रतिबन्ध भी लगाती है जिनका पालन व्यक्ति को अनिवार्य रूप से करना पड़ता है।
  - वैवाहिक समूह निश्चित करने में व्यक्ति की अपनी इच्छा कोई काम नहीं करती, जाति स्वयं इस कार्य को पूरा करती है।
- **पेशों का निर्धारण**
  - पेशों के निर्धारण में जाति प्रथा का योगदान महत्वपूर्ण है।
  - बेकारी की समस्या से ग्रसित होकर व्यक्ति आत्महत्या या अपराधों को स्वीकार करता है।
    - लेकिन जाति व्यवस्था के कारण इस समस्या का निराकरण स्वतः ही हो जाता है।
  - प्रत्येक व्यक्ति अपेक्षित कार्यों के सम्पादन में ही विश्वास करता है तथा निर्धारित व्यवसाय में ही उन्नति करता है।
- **व्यक्तियों के व्यवहार पर नियंत्रण**
  - प्रत्येक जाति के अपने कुछ निर्धारित नियम होते हैं और प्रति होते है ।
  - इनका पालन करना प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक होता है।
  - इनकी उपेक्षा करने पर जाति के वजा अपनी जाति से बहिर्गमन कर सकते हैं।
    - अतः ऐसी स्थिति से व्यक्ति सदैव बचना चाहता है जिससे उनके आचरण नष्ट होते हैं तथा अनाचार व दुर्व्यवहार होने की सम्भावना नहीं रहती।
- **रक्त की शुद्धता बनाए रखना**
  - रक्त की शुद्धता बनाये रखने में भी जाति का बहुत योगदान है।
  - अपनी ही जाति में विवाह करता है जिससे अपने रक्त में वर्ण संकरता नहीं आ सकती।
  - यदि दूसरी जाति में विवाह करता है तो दो जातियों से उत्पन्न सन्तान वर्ण संकर होगी तथा रक्त में विभिन्नता भी उत्पन्न हो जाएगी।
- **समाज के विकास में सहायक**
  - सामाजिक परम्पराओं, प्रथाओं , रीति–रिवाजों आदि की निरंतरता के कायम रखने में जाति प्रथा ने सहयोग दिया है।
  - सामाजिक आदर्श मापदण्डों के पालन न करने की स्थिति में व्यक्ति को दण्ड का भागीदार होना पड़ता था।
  - प्रत्येक जाति के साथ एक श्रम का प्रकार जुड़ा हआ है, क्योंकि समाज का अस्तित्व श्रम के सभी प्रकारों के परस्पर संयोजन में निहित है
    - अतः सभी जातियों को विविध श्रम प्रकारों के साथ जुड़ा रहने के कारण परस्पर सहयोगी रहना पड़ता है।
- **धार्मिक व्यवस्था व संस्कृति की रक्षा**
  - प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तिगत जीवन में धार्मिक तत्वों को स्थान नहीं दे सकता था।
  - जातीय धर्म के पालन में तत्परता बरती जाती थी।
  - ऐसा न किए जाने पर व्यक्ति दण्ड का भागीदार होता था।
  - प्रत्येक जाति अपनी धार्मिक विधियों की रक्षा करती थी।
  - वे अपने तरीकों से देवी–देवताओं की पूजा अर्चना किया करती थीं।
  - हट्टन ने लिखा है कि प्रत्येक जाति की अपनी एक सामान्य संस्कृति रही है। जिसके अन्तर्गत उस जाति विशेष का ज्ञान व्यवहार, कार्यकुशलता आदि आते हैं।
  - वे सब जाति के सदस्यों में पीढ़ी अपने बुजुर्गों से इस बात को सीखते है जिससे जाति की संस्कृति स्थिर रहती है।
- **मानसिक व सामाजिक सुरक्षा**
  - जाति अपने सदस्यों को मानसिक सुरक्षा, एक स्थिर सामाजिक पर्यावरण प्रस्तुत कर सकती है।
  - व्यक्ति अपनी स्थिति, व्यवसाय व जीवन साथी चुनने से मानसिक चिन्ता से मुक्त रहता है उसे स्वतः ही जाति ये सब चीजें प्रदान कर देती है।
  - जाति सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने का कार्य भी करती है।

- प्रत्येक जाति का अपना संगठन होता है जो लंगड़ों, अनाथों, बीमारों, अन्धों, वृद्धों और विधवाओं को सुरक्षा प्रदान करती हैं।
- असहाय अवस्था में जाति इन व्यक्तियों को अपना सहयोग प्रदान करती हैं।
- व्यक्ति पर किसी भी प्रकार का संकट क्यों न हो, जाति हमेशा उसे दूर करने में तत्पर रहती है।
- इस प्रकार जाति का संगठन व्यक्ति की मानसिक व सामाजिक परेशानियों को दूर कर सुरक्षा प्रदान करता हैं।

जाति प्रथा के दोष/चुनोतियाँ

- जिस तरह जाति समाज की सेवा कर समाज को समुन्नत किया है, उसी तरह दूसरी ओर अपकार की मात्रा भी इतनी बढ़ गई।
- **इस प्रथा की विघटनकारी प्रकृति निम्नानुसार हैः**
  - **सामाजिक क्षेत्र में**
    - सामाजिक क्षेत्र में जाति प्रथा मानव को तोड़ती है।
    - जाति की विभिन्नता होने के कारण उच्च वर्ग व निम्न वर्ग के मानवों में आपस में अस्पृश्यता की भावना पैदा हो गई।
    - मानवता के नाम पर कलंक लग गया है।
    - मानव–मानव से घृणा करने लगा है।
    - निम्न वर्ग में जैसे–चमार, कुम्हार, खटीक इत्यादि जातियों को गाँव की सीमा से बाहर रखा जाता है।
    - वे वेदों, उपनिषदों, ग्रन्थों का अध्ययन व मन्त्रों का उच्चारण नहीं कर सकते।
    - मानवीय आदर्शों की प्रकृति में नहीं आ सकते ।
    - ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य जाति के सदस्यों ने निम्न वर्गीय मनुष्यों पर अवर्णनीय अत्याचार किए।
      - उनके लिए मंदिरों के, धर्मशालाओं के द्वार बन्द थे ।
      - कुएँ पर चढ़ना तथा स्वच्छ वस्त्र पहनना एक अपराध था।
      - प्रत्येक त्यौहार को खुशी से नहीं मनाने दिया जाता था।
      - वह वर्ग निम्न स्तर का ही कार्य कर सकता था।
    - वेदों तथा उपनिषदों में स्त्रियों को पात्र नहीं माना जाता था, परन्तु जाति के विकास के दौरान स्त्रियों को राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक सभी अधिकारों से वंचित रखा जाता था।
    - बाल–विवाह, दहेज–प्रथा, अनमेल विवाह, मृत्युभोजों और अनेक समस्याओं के जन्म के पीछे जाति प्रथा का योगदान रहा है।
    - जाति से बहिर्गत होने के भय से व्यक्तियों ने आदर्शविहीन नियमों व रीति रिवाजों का पालन किया।
      - ये परम्पराएँ आज तक भी बनी हुई है।
    - परन्तु आधुनिक युग में शिक्षित वर्ग ने कुछ समस्याओं का समाधान कर दिया है।
    - नियमानुसार बाल विवाह प्रथा, दहेज प्रथा एक अपराध है।
    - सरकार द्वारा निम्न वर्ग का प्रत्येक जगह स्थाई व निश्चित कोटा निर्धारित कर दिया गया है।
      - अतः शहरों में तो नहीं परन्तु गाँवों में आज भी ये सामाजिक समस्याएँ देखने को मिलती हैं।
  - **आर्थिक क्षेत्र में**
    - जाति श्रमिक गतिशीलता में बाधा पहुँचाती है।
      - अर्थात व्यक्तियों के पेशे बदलने पर रोक लगाती है।
      - इससे व्यक्ति यदि किसी अन्य व्यवसाय की जानकारी रखता हो तो भी वह अपना ही व्यवसाय करेगा चाहे उसमें फायदा हो या नुकसान।
  - **श्रमिक की कार्य–कुशलता में बाधा पहुँचाती है**
    - अनेक व्यक्तियों को अपने परम्परागत पेशे अच्छे नहीं लगते और वे नये पेशे करना चाहते हैं, परन्तु वे अपने जातीय व्यवसाय को परम्परा के कारण नहीं बदल सकते थे।
    - निष्कर्षतः श्रमिक की कार्यकुशलता का हास होता था परंतु आज के युग में प्रत्येक व्यक्ति हर प्रकार से स्वतंत्र है।
    - वह किसी भी क्षेत्र में कुछ भी व्यवसाय कर अपना आर्थिक स्तर बढ़ा सकता है।
    - सांस्कृतिक क्षेत्र में जाति अवरोधक का कार्य करती थी।

- ➢ उसी व्यक्ति को समान रूप से सांस्कृतिक उन्नति करने का अधिकार नहीं था।
- ➢ सांस्कृतिक कार्यक्रम, मनोरंजन कराने का अधिकार केवल, राजाओं, भाटों व चारणों को ही था।
- ➢ अन्य वर्ग का यदि व्यक्ति कलाकार बनने की क्षमता रखता था तो भी वह मनोरंजन नहीं कर सकता था, करता तो जाति से निष्कासित कर दिया जाता था।
- ➢ परन्तु आज के युग में मनुष्य सभी क्षेत्र में स्वतंत्र है।

- ○ **धार्मिक और राजनीतिक क्षेत्र में**
  - ▪ धार्मिक क्षेत्र में भी जाति का कार्य विघटनकारी रहा था।
  - ▪ उच्चवर्गीय ब्राह्मण ही वेदों का पठन–पाठन कर सकता था तथा ब्राह्मणों, वैश्यों व क्षत्रियों के लिए ही मंदिरों का दरवाजा खुला था।
  - ▪ ब्राह्मणों को ही ईश्वर दर्शन देता था, स्वर्ग की सीटें भी ब्राह्मणों के लिए निश्चित थी।
  - ▪ निम्न वर्ग द्वारा ईश्वर की पूजा, अर्चना–मनन व ध्यान करना एक अपराध माना जाता था।
  - ▪ ऐसा करने पर उसे कोड़ों की मार का सामना करना पडता था।
    - ➢ परन्तु आज प्रत्येक वर्ग अपनी क्षमता के अनुसार ईश्वर की आराधना कर सकता है।
  - ▪ जाति ने राजनीतिक क्षेत्र में भी समाज की हानि पहुँचाई थी।
  - ▪ अलग जातियों के अलग–अलग गुट थे।
  - ▪ क्षत्रियों का शासन था।
  - ▪ क्षत्रियों के हाथ में ही शासन की बागडोर थी।

जाति प्रथा के कार्य एवं चुनोतियाँ

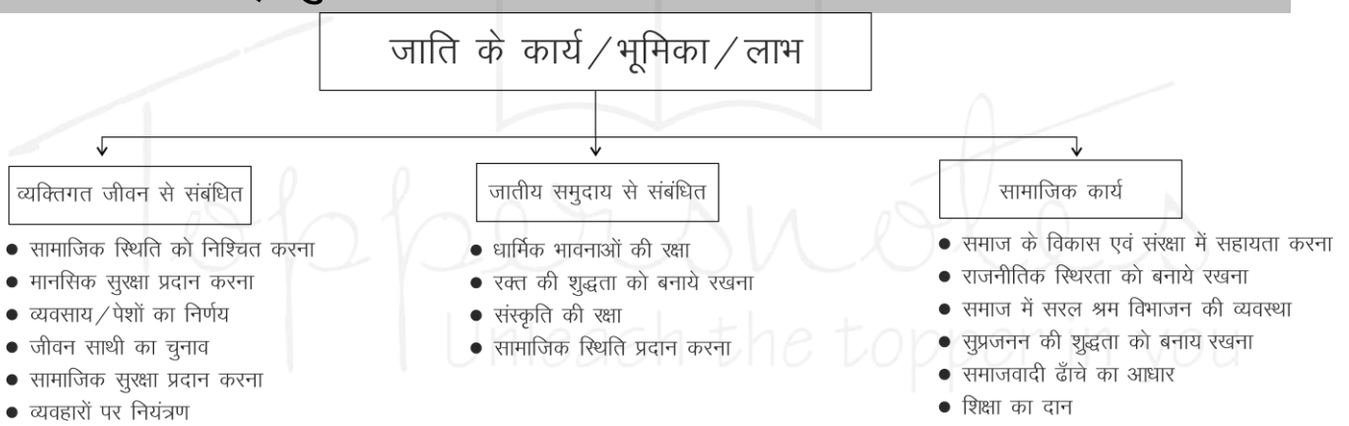

जाति प्रथा की चुनौतियाँ/हानियाँ/अवगुण

- राधाकृष्णन के अनुसार – दुर्भाग्यवश वही जाति प्रथा जिसे सामाजिक संगठन को नष्ट होनें से रक्षा करने के साधन के रूप में विकसित किया गया था, आज उसी की उन्नति में बाधक बन रही है

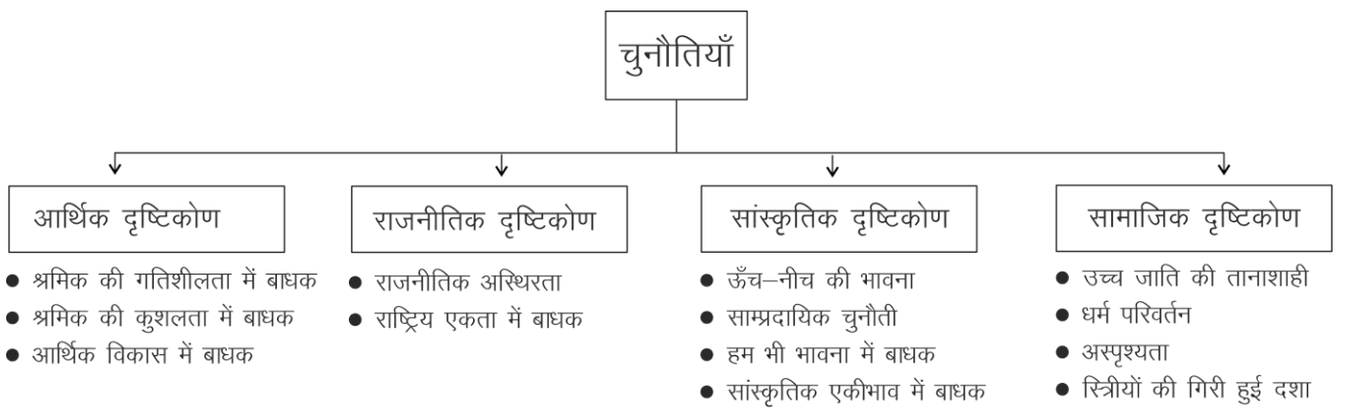

- जाति प्रधान भारतीय समाज में ग्रामीण शक्ति संरचना के विश्लेषण के क्रम में श्रीनिवास ने प्रभुजाति की अवधारणा को प्रस्तुत किया है।

प्रभवजाति:

- 20वीं शताब्दी में प्रभवजाति की अवधारणा ग्रामीण अध्ययनों के परिणामस्वरूप हमारे सामने आयी है।
- इसका मतलब है कि गाँव की कछ जातियाँ आर्थिक और राजनीतिक दृष्टि से प्रभावी हो जाती हैं और वे एक क्षेत्र विशेष में महत्वपूर्ण समझी जाती हैं।
- सामान्यतया **प्रभव जाति वह है, जिसके पास** –
  - अपने क्षेत्र में कृषि भूमि अधिक होती है, दूसरे शब्दों में यह जाति आर्थिक दृष्टि से समृद्ध होती है।
  - प्रभव जाति राजनैतिक रूप में यानी वोट बैंक की तरह शक्तिशाली होती है।
  - इस जाति की जनसंख्या अधिक होती है।
  - इस जाति का कर्मकाण्ड में ऊँचा स्थान होता है।
  - इस जाति में अंग्रेजी माध्यम से पढ़े-लिखे लोग होते हैं।
  - यह जाति कृषि के क्षेत्र में अग्रणी होती है।
  - यह जाति शारीरिक दृष्टि से बाहुबलियों की होती है।
- यह होते हुए भी प्रभव जाति का दायरा केवल उच्च जातियों तक ही नहीं होता। प्रभव जाति निम्न जातियों में भी पायी जाती है।

जजमानी प्रथा का अर्थ एवं परिभाषा

- जजमानी-प्रथा का अर्थ उस ग्रामीण व्यवस्था से है जिसमें जातियाँ परस्पर सेवाओं का विनिमय करती है।
- विलियम बाइजर ने सर्वप्रथम अपनी पुस्तक "**दा हिन्दू जजमानी सिस्टम**" में इस प्रथा का उल्लेख किया है-
- आस्कर लेविस ने "**विलेज लाइफ इन नार्दरन इण्डियाँ"** कृति में जजमानी प्रथा के विषय में लिखा हैं - " इस व्यवस्था में प्रत्येक जाति-समूह से अन्य जातियों के परिवारों के लिए कुछ विशेष निश्चित सेवाओं की आशा की जाती है।
- इसका अर्थ यह है कि गाँव में सभी जातियाँ अपना-अपना व्यवसाय करती है, खाती लकड़ी का सामान बनाता है, नाई बाल काटता है, लुहार लोहे के औजार बनाता है, किन्तु ये लोग अपनी सेवाएँ केवल उन्हीं परिवारों को प्रदान करते हैं जिन परिवारों से उनके सम्बन्ध वंश परम्परा से चले आ रहे है बदले में वे परिवार भी उन सेवाओं के बदले उन्हें कुछ पारितोषक प्रदान करते है, जैसे लुहार, तेली, धोबी, नाई आदि ने किसान को अपनी-अपनी सेवाएं प्रदान की है तो किसान भी अपनी फसल के काटने के समय उनकी सेवाओं के आधार पर उन्हें निश्चित मात्रा में अनाज दे देता है।
- जजमानी प्रथा में जिस परिवार की सेवा की जाती है वह परिवार या उसका मुखिया सेवा करने वाले का **जजमान** कहलाता है और "सेवा देने वाला" व्यक्ति "**काम करने वाला या कमीन"** कहलाता है उदाहरण के लिए किसान को लुहार, धोबी, तेली, नाई आदि अपनी सेवाएँ देते है तो किसान जजमान है और सेवा देने वाले लोग कमीन है।

जजमानी व्यवस्था का महत्व अथवा लाभ

सामाजिक तथा सामुदायिक महत्व	व्यावसायिक क्षेत्र में महत्व	विधि प्रकार के महत्व
• वैयक्तिक सम्बन्ध के क्षेत्र में • प्रकार्यात्मक कार्यो में सन्तुलन • सामाजिक सुरक्षा की भावना • जातिवाद की कडुवाहट में कमी • सामाजिक नियंत्रण के साधन के रूप में • ग्रामीण समुदाय में एकता	• वंशानुगत व्यवसायों की सुरक्षा • जीविका के साधन के रूप में • व्यावसायिक प्रतियोगिता और संघर्ष का अभाव • आर्थिक सुरक्षा	• अनुशासन को प्रोत्साहन • ग्राम समुदाय में एकता के दर्शन • विभिन्नता में एकता • संतोष की भावना • मानसिक सुरक्षा • राजनीतिक सुदृढ़ता में सहायक